संस्थापित १८६७ ई.

ओ३म्

आर्य मित्र

साप्ताहिक

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुख पत्र

एक प्रति ₹ २.००
वार्षिक शुल्क ₹ १००
(विदेश ५० डालर वार्षिक) आजीवन शुल्क ₹ १०००

● वर्ष : १२२ ● संयुक्तांक : २८, २६ ● ०८ एवं १५ अगस्त, २०१७ भाद्रपद कृष्ण पक्ष अष्टमी सम्वत् २०७४ ● दयानन्दाब्द १६३ वेद व मानव सृष्टि सम्वत् : १६६०८५३११८

स्वतंत्रता दिवस – जन्माष्टमी विशेषांक

राम प्रसाद विस्मिल

चन्द्रशेखर आजाद

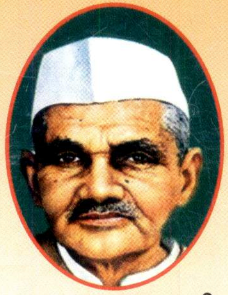

लाल बहादुर शास्त्री

सुभाष चन्द्र बोस

सरदार बल्लभ भाई पटेल

सरदार भगत सिंह

मंगल पाण्डेय

अशफाक उल्ला

डॉ. धीरज सिंह आर्य
कार्यवाहक प्रधान/संरक्षक

स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
मंत्री/प्रधान सम्पादक

महर्षि दयानन्द ने आजादी की अलख जगाई

❑ डॉ0 धीरज सिंह

30 जौ0 महर्षि दयानन्द सरस्वती ने देश की आजादी की सर्वप्रथम अलख जगाई जिससे देश में क्रान्तिकारियों की एक बड़ी सेना बनकर खड़ी हो गई। क्रान्तिकारियों में जो विचार देशभक्ति का पैदा हुआ उसका मूल था "सत्यार्थ प्रकाश" जो अमूल्य रत्न के रूप में हमें प्राप्त हुई है। ये विचार आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डॉ0 धीरज सिंह जी ने जिला आर्य प्रतिनिधि सभा हापुड़ द्वारा आयोजित वेद प्रचार कार्यक्रम के अंतर्गत आर्य समाज चितौली हापुड़ में व्यक्त किये। आपने बताया कि ग्रामीण परिवेश मे रहने वाले पुराने आर्य समाजी सच्चे आर्यवीर तथा क्रान्तिकारी थे। सच्चे देशभक्त थे। खद्दर धारण करना, स्वदेशी एवं स्वदेश के बारे में स्वयं राष्ट्र भक्त बनकर दूसरों को प्रेरणा प्रदान करते थे। उनका जीवन सीधा–सादा–सरल स्वभाव का होता था। वे ग्राम में एक आदर्श पुरुष के रूप में अच्छी प्रतिष्ठा को प्राप्त होकर सम्मान के साथ जीवन बिताते थे और अपने शेष समय में आर्य समाज का प्रचार प्रसार किया करते थे। आर्य समाज चितौली इसका जीता–जागता उदाहरण है। आर्य समाज हापुड़, आर्य समाज पिलखुवा, आर्य समाज निजामपुर जैसे ग्रामों पर इनके सुविचारों की छाप रही। मैं ऐसे ग्राम में आकर अपना सौभाग्य अनुभव करता हूँ तथा उन पुराने आर्य पुरुषों श्री देवकी शरण

आर्य, श्री खूबसिंह आर्य, श्री बलराज सिंह, श्री शौराज सिंह आर्य आदि सभी को नमन करता हूँ। प्रधान जी ने जिला सभा हापुड़ के सभी अधिकारियों की प्रशंसा की। उन्होंने बताया आर्य समाज ने सदैव राष्ट्ररक्षा के लिए आन्दोलन चलाये, हैदराबाद का सत्याग्रह तथा हिन्दी रक्षा आन्दोलन, सत्यार्थ प्रकाश रक्षा आन्दोलन, गौरक्षा आन्दोलन, शराब बन्दी आन्दोलन वर्तमान समय में चल रहा है। पिछले दिनों हरियाणा प्रदेश में सफलता मिली और शराब बन्द हुई। पूरे देश में आर्य समाज का प्रयास चल रहा है। उ0प्र0 में पिछले वर्ष से आन्दोलन चला हुआ है। समय–समय पर ग्राम और नगर स्तर पर इसे तेज करने की आवश्यकता है। प्रत्येक आर्य का कर्तव्य है कि इस आन्दोलन की सफलता के लिए तन–मन–धन से हमारा मनोबल बढ़ाकर महर्षि दयानन्द के सपने को साकार करें। ग्राम–ग्राम में समितियाँ बनाकर सभा कार्यालय भिजवायें। कार्यक्रम में डॉ0 विकास आर्य, ज्ञानेन्द्र चौ0, मा0 कुंवर पाल सिंह आर्य, सुरेन्द्र कबाड़ी, माया आर्या, सुरेन्द्र सिंह बाला, अंकुरबाना, दयापाल बाना, महीपाल सिंह आर्य, भूपसिंह आर्य आदि अधिकारी एवं कार्यकर्ता उपस्थित रहे। कार्यक्रम अत्यन्त प्रभावशाली रहा। सभामंत्री स्वामी धर्मेश्वरानन्द जी आचार्य प्रेमपाल शास्त्री एवं पुरोहित धर्मेन्द्र शास्त्री के भी प्रवचन हुए।

सम्पादकीय

स्वतंत्रता दिवस पर विशेष एक चिन्तन

देश की स्वतंत्रता के मूल में हैं महर्षि दयानन्द और आर्य समाज

15 अगस्त 1947 से देश बड़े उत्साहपूर्वक प्रति वर्ष स्वतंत्रता दिवस मनाता हैं आबालवृद्ध सभी पूर्ण प्रसन्नता से राष्ट्रीय पर्व के रूप में राष्ट्रीय ध्वज का सम्मान करते हुए दिखाई देते हैं। क्योंकि हम सभी भारतीय अपने को बन्धनमुक्त अनुभव करते हैं। अपने पूर्वजों से सुनते हैं कि पराधीन काल में हमारा उत्पीड़न किया जाता था। हमें तरह–तरह की यातनायें दी जाती थीं। जेलों में रहकर हमारे पूर्वज अनेक कष्ट सहते रहे। ऐसे समय में जो भी देश के लिए आवाज उठाता वहीं अंग्रेजों के लिए दुश्मन था। युगपुरुष महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सर्वप्रथम स्वदेश तथा स्वराज्य का नारा दिया। अपनी पुस्तकों में उन्होंने सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य प्रभो हमें कब मिलेगा? ऐसी प्रार्थनायें समय–समय पर की हैं। कलकत्ता में वायसराय कर्नल नार्थ ब्रुक के पूछने पर कि "स्वामी जी आपको मेरे राज्य मे धर्म प्रचार करने में कोई परेशानी तो नहीं?" स्वामी जी ने कहा मुझे कोई परेशानी नहीं है। तब उसने प्रार्थना की कि हे स्वामिन् आप अपने भाषण से पूर्व प्रभु से प्रार्थना कर दिया करें कि अंग्रेजों का राज्य इस धारा पर चिरस्थाई बना रहे। इतना सुनते ही महर्षि स्वामी जी का देदीप्यमान चेहरा तमतमा उठा और सिंह की तरह उसकी ओर अभिमुख होकर उत्तर दिया कि वायसराय! मैं प्रतिदिन प्रार्थना करता हूँ कि अंग्रेजों का राज्य इस भारत भूमि से शीघ्र समाप्त हो जाये और हम स्वतंत्रता का अनुभव कर सकें। इस सिंह गर्जना को सुनकर वायसराय तुरन्त उठकर चला गया और स्वामी जी के पीछे गुप्तचर (सी0आई0डी0) लगा दिया तथा षड्यंत्र द्वारा स्वामी जी का जीवन भी समय से पूर्व ही समाप्त कर दिया।

उसके पश्चात् आर्य समाज का स्वर्णयुग आया। हैदराबाद के नवाब उस्मान अली ने फतवा जारी कर दिया कि मेरे राज्य में कोई हिन्दु मन्दिरों मे शंख तथा घण्टा नहीं बजा सकेगा, धोती नहीं बांधेगा, मंदिरों में आरती पूजन नहीं करेगा आदि – आदि। हिन्दू समाज सोया पड़ा था और मैथिलीशरण जी गुप्त तो लिखते हैं कि मृत अवस्था में था ऐसे समय में आर्य समाज के मूर्धन्य सन्यासी म0 नारायण स्वामी जी, लौह पुरुष स्वामी स्वतत्रतानन्द जी, श्री घनश्याम सिंह जी गुप्त, श्री देशबन्धु जी आदि नेताओं ने पूरे देश में बैठकें करके निर्णय लिया कि हैदराबाद के अहंकार को समाप्त करना है।

इस घोषणा से आर्यजगत् में क्रान्ति की लहर दौड़ गई। गुरुकुलों के ब्रह्मचारी क्रान्तिकारियों की तरह से अपनी पढ़ाई छोड़कर हिन्दुओं की धर्म स्वतंत्रता के लिए दक्षिण दिशा की ओर चल पड़े। पं0 व्यास देव जी शास्त्री हाथ में थाल–दीपक लेकर मन्दिर में पूजा करने चले। पीछे–पीछे भीड़ थी। राज्य के सुरक्षाधिकारियों ने कहा कि आप तो आर्य समाजी हैं, मूर्ति पूजा को नहीं मानते तो फिर ये थाल लेकर क्यों जा रहे हो? तो शास्त्री जी ने कहा कि धर्म की स्वतंत्रता के लिए राजा का प्रतिबन्ध तोड़ने के लिए स्वामी दयानन्द के सिपाही निश्चय कर चुके हैं और पूरे संघर्ष की कहानी अत्यन्त प्रेरणाप्रद इतिहास है। आर्य समाज को विजय मिली धर्म जागरण का यह अभियान सफल हुआ तभी स्वतंत्र भारत होने पर देश के गृहमंत्री सरदार पटेल ने कहा था कि यदि आर्य समाज का आन्दोलन 1939 में सफल न हुआ होता तो हम हैदराबाद राज्य को जीतकर देश का हिस्सा न बना पाते। ये आर्य समाज के पुरुषार्थ का ही फल है।

अतः धर्म की स्वतंत्रता से ही देश की स्वतंत्रता की सुरक्षा सम्भव है। आज की सरकार इस सुरक्षा के लिस संकल्प ले। मैं इस अवसर पर सभी अमरशहीदों को शतशः नमन करता हुआ आपको शुभकामनायें प्रदान करता हूँ।

हैदराबाद के आर्य समाजी शहीदों की स्मृति में विशेष

ऐ मेरे वतन के लोगों, जरा याद करो आर्य समाजियों की कुर्बानी

❑ आचार्य सोमेन्द्र – दिल्ली

संसार के सम्मानित राष्ट्रों का इतिहास उन व्यक्तियों के चरित्रों से सदा भरपूर रहा है, जिन्होंने उच्च एवं पवित्र उद्देश्यों की पूर्ति के लिए महान् से महान् त्याग किया और समय पड़ने पर इस संघर्ष में अपने जीवन को न्योछावर कर दिया और पीछे बलिदानों के अवशेष रख गए, जो अनुगामियों का पथ प्रदर्शन कर सकते हैं।

शहीदों को मृत्यु कभी स्पर्श नहीं करती अपितु वे स्वयं मर कर अमर हो जाते हैं। इतिहास साक्षी है। ऐसी महान आत्माओं का रक्त कदापि व्यर्थ नहीं गया, अपितु समय आने पर एक ऐसे प्रखर प्रचंड रूप में प्रवाहित हो निकला जिसमें हिंसा, अत्याचार और पाशविकता के दल स्वतः निमग्न हो गए। ये व्यक्ति धर्म–प्रचार, सदुपदेश, प्रजावाद की प्रस्थापना, शांति और प्रेम एवं सत्य साधारण व्यक्तियों तक पहुंचाने के लिये अपने जीवन–लक्ष्य की कठिनाईयों को पार कर आगे बढ़ते ही रहे। इन्होंने सदा पराक्रान्तों का साथ दिया और मानवता के उच्च आदर्शों के रक्षक हुए और इन हेतुओं से निज तन–मन–धन की बलि देकर स्पष्ट कर दिया कि इनका सेवा कार्य में कितना उत्साह था तथा बलिवेदी से कितना ऊँचा प्रेम था।

आर्य समाज के शहीद मरने के के बाद अमर हो गये और इन हुतात्माओं के रक्त में हैदराबाद में वैदिक धर्म का जो चमन सींचा गया, वह अब एक विस्तृत उद्यान बन गया है और रियासत में वैदिक धर्म का नव सन्देश दे रहा है। यहां हम कुछ आर्य समाजी शहीदों का संक्षिप्त परिचय दे रहे हैं जो वर्तमान में संसार में उपस्थित तो नहीं हैं पर वे सबके हृदयों में स्मरण रहेंगे और ऐसा प्रतीत होता है कि हम इन्हें कभी भूल नहीं सकेंगे।

1. वेद प्रकाश जी:– वेद प्रकाश जी का पूर्व नाम दासप्पा था। दासप्पा संवत् 1827 में गुजोटी में पैदा हुए। इनकी माता का नाम रेवती बाई और पिताश्री का नाम रामप्पा था। गरीब माता–पिता को इसकी क्या सूचना थी कि उनका बेटा बड़ा होकर हुतात्मा बनेगा और वैदिक धर्म के मार्ग में शहीद होकर अमर हो जाएगा। दासप्पा ने मराठी माध्यम से आठवीं श्रेणी तक शिक्षा ग्रहण की। जैसे–जैसे ये बढ़ते गये वैसे–वैसे वे धर्म की ओर आकर्षित होते गये। वे आर्य समाज के सत्संगों में बराबर सम्मिलित होते थे। वैदिक धर्म के आकर्षण ने इन्हें महर्षि दयानन्द का पक्का भक्त बना दिया। आर्य समाजी बनने के बाद यह वेद प्रकाश कहलाने लगे थे। इनका आर्य समाज में असाधारण प्रेम एवं निष्ठा के ही कारण गुंजोटी में आर्य समाज की नींव डाली गयी पर स्थानीय ईर्ष्यालु यवन इन्हें देखकर जलने लगे थे। वेद प्रकाश जी सुगठित शरीर एवं सद्गुण रखते थे और लाठी–तलवार चलाने की विद्या में पर्याप्त दक्ष थे। इनकी यह दक्षता कई भयंकर संकटों के समय इनकी सहायक सिद्ध हुई। कई बार विरोधी दल ने इन पर आक्रमण किये और ये अपने आपको सुरक्षित रखने में सफल हुए।

गुंजोटी का छोटे खाँ नाम का एक पठान स्त्रियों को गलत निगाहों से देखता था। एक दिन वेद प्रकाश जी ने इसे ऐसा करने से रोका और सावधान किया कि भविष्य में इस प्रकार कुदृष्टि मातृसमाज पर न डालें। यह बात गुण्डों को हृदयग्राही न थी और सब इनके शत्रु हो गए। वेद प्रकाश जी ने गुंजोटी में हिन्दुओं के लिये पान की एक दुकान खोल दी और चांद खाँ (पान का एक व्यापारी इनका शत्रु हो गया और भीतर ही भीतर इनके विरुद्ध षड्यंत्र रचने लगा।

एक दिन यवनों ने स्थानीय आर्य समाज के मंत्री के मकान पर अकस्मात् धावा बोल दिया, इसकी सूचना वेद प्रकाश जी को मिली, वे इन आक्रमणकारियों को रोकने के लिए निःशस्त्र ही चले गये। मंत्री के मकान के समीप दो–तीन मुसलमानों ने इन्हें पकड़ लिया और आठ–नौ व्यक्तियों ने इन्हें नीचे गिरा कर हत्या कर दी। विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि उस

दिन पुलिस ने वहां के प्रतिष्ठित हिन्दुओं को थाने में बुलाकर बैठा रखा था। आक्रमणकर्ताओं और हत्यारों को पहचान लिया गया और न्यायालय मे गवाह भी उपस्थित किये, पर फिर भी हत्यारों को निर्दोष घोषित कर दिया गया। वेद प्रकाश जी का रक्त हैदराबाद में पहला रक्त था जो बड़ीनिर्दयता के साथ बहाया गया था और इसके बाद वीर आर्यों के बलिदानों का एक सिलसिला सा चल पड़ां

2. धर्म प्रकाश जीः– धर्म प्रकाश जी का पूर्व नाम नागप्पा था। नागप्पा जी का जन्म कल्याणी में संवत् 1839 में हुआ था। इनके पिताश्री का नाम सायन्ना था। इनका पदार्पण जब आर्य समाज में हुआ तब से ये धर्म प्रकाश कहलाने लगे। कल्याणी एक मुस्लिम नवाब की जागीर थी। वहां मुसलमानों का अत्याचार नंगा–नाच कर रहा था। मुसलमानों के अत्याचारों को देखकर धर्म प्रकाश इसकी रोक–थाम की तैयारी में लग गये। हिन्दुओं को शस्त्र विद्या सिखाने लगे। कल्याणी के मुसलमान हिन्दुओं के शारीरिक अभ्यास से रुष्ट हो गये और उन्होंने इनकी हत्या करने की कमर कस ली। कल्याणी के इस धर्मवीर पर कई बार आक्रमण किये गये पर आक्रमणकाकरयों को सल्ता नहीं मिली।

कल्याणी के खाकसार इनकी हत्या की ताक में रहने लगे। 27 जून 1837 ई. की रात को धर्म प्रकाश आर्य समाज कल्याणी के सत्संग से अपने घर वापस जा रहे थे कि खाकसारों ने इन्हें एक गली में घेर कर बरछों और भालों की सहायता से मार डाला। धर्म प्रकाश की हत्या से आर्य समाज में शोक व दुःख की लहर दौड़ गयी। इस हत्याकाण्ड के हत्यारे भी न्यायालय से निर्दोष छोड़ दिये गये।

3. महादेव जीः– महादेव जी अकोलगा के रहने वाले थे। साकोल आर्य समाज के सत्संगों में जब इन्हें कई बार सम्मिलित होने का अवसर मिला, तब वैदिक धम्र का जादू इन पर चढ़ गया। इनके मन और मस्तिष्क पर इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि आर्य समाजी बन जाने के बाद वैदिक धर्म के प्रचार की धुन लग गयी। तरुणोत्साह और साहस इन्हें इस मार्ग पर आगे बढ़ाता ही रहा। महादेव जी की मुखाकृति पर तेज था। भाषण देते समय इनके मुख से जो वाक्य निकलते, उन्हें लोग बड़ी तन्मयता और रुचि से सुनते और एक तरुण आर्य युवक को प्रचार के काम में इस प्रकार तल्लीन देखकर लोगों को भी इच्छा होती थी कि वे भी इसी प्रकार बनें। महादेव जी के प्रचार का काम जब प्रगति पर था उस समय मुसलमान इनके अकारण शत्रु बन गये। कई बार इन पर इस दृष्टि से आक्रमण हुए कि वे सदा के लिए मौन हो जाएं पर वे बचते ही रहे।

एक दिन की घटना है कि महादेव जी अपने प्रिय धर्म प्रचारार्थ कहीं जा रहे थे कि रास्ते में किसी अज्ञात व्यक्ति ने पीछे से आबर छुरा घोंप दिया और 14 जुलाई 1938 के दिन यह आर्य युवक 25 वर्ष की आयु में सदा के लिए इस संसार से विदा हो गया।

4. श्याम लाल जीः– धर्मवीर श्याम लाल जी का जन्म 1903 ई. भलकी में हुआ था। इनके पिताश्री का नाम भोला प्रसाद और माता का छोटूबाई था। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा मराठी मं हुई। ये एक पौराणिक परिवार से थे। इनके एक मामा आर्य समाजी थे, जिनके प्रभाव से श्याम लाल जी के ज्येष्ठ भ्राता बंसीलाल जी वैदिक धर्म के अनुयायी और स्वामी दयानन्द के अन्तःकरण के भक्त बन गये और आर्य समाज के सर्वप्रिय नेता भी कहलाने लगे। गुलबर्गा में आपके ही प्रयासों से आर्य समाज की स्थापना हुई। वे स्वयं इस समाज के मंत्री बनकर कार्य संचालन करते रहे। 1925 ई. में वकील बने और उदगीर में वकालत करने लगे। निजी जीविकोपयोगी कार्य करते हुए आर्य समाज का प्रचार भी करते थे। 1926 में इन्हें चर्म रोग लग गया और वह इतना बढ़ा कि पूरा शरीर फूल गया। रोग निवारणार्थ आप लाहौर गये। अभी आप लाहौर में ही थे कि 1926 ई. में स्वामी श्रद्धानन्द जी शहीद हो गये। स्वामी जी के इस बलिदान का प्रभव इन पर अत्यधिक पड़ा। लाहौर से वापस आकर उदगीर में आर्य समाज की स्थापना की और प्रतिज्ञा की कि आजीवन वैदिक धर्म का प्रचार करेंगे। उदगीर के तात्कालीन मुसलमान तहसीलदार ने स्थानीय मुसलमानों को प्रेरित कर इनके मकान पपर आक्रमण करवा दिया, परन्तु यह आक्रमण विफल रहा।

आर्य समाज उदगीर की स्थापना के बाद आपके अथक प्रयासों से विजय दशमी के अवसर पर प्रथम बार जुलूस निकाला गया। होली के जुलूस के अवसर पर आप पर पुनः आक्रमण हुआ पर इस बार भी आप बच

गये। श्याम लाल जी ने अछूतों के लिए एक पाठशाला, एक व्यायाम शाला तथा एक निःशुल्क चिकित्सालय भी स्थापित किया।

1928 ई. में उदगीर आर्य समाज का वार्षिकोत्सव हुआ और इसी के बाद पुलिस आपका पीछा करने लगी। इसी वर्ष धारा 104 के अधीन आप पर झूठा मुकद्मा चलाया गया और आपसे दो हजार की जमानत और मुचलका लिया गया। श्याम लाल जी उदगीर से बाद निकलकर भालको, कल्याणी, औराद, शाहजहानी, लातूर तथा औसा आदि स्थानों पर प्रचार करने लगे। कई बार मुसलमानों ने आप पर आक्रमण किया और कई ऐसे अवसर आये जबकि हिन्दतुओं ने आपको अपने पास आश्रय देना अस्वीकार किया। आपने कई रातें मार्ग पर चलते हुए बितायीं और दिन में फिर प्रचार कार्य किया। 1935 ई. में माणिक नगर की यात्रा के अवसर पर मुसलमानों ने आप पर छुरा घोंप देने का प्रयत्न किया पर एक नवयुवक बीच में आया, स्वयं जख्मी हुआ और इन्हें बचा लिया। 1938 ई. में इन पर पुलिस ने एक झूठा मुकद्मा चलाया और न्यायालय ने इन्हें दीर्घकालिक दण्ड दिया। अभी आप कारावास में दंड भोग रहे थे कि आपका देहांत हो गया। पं0 श्याम लाल जी का नाम हैदराबाद आर्य समाज के इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिखा रहेगा क्योंकि वे अपने अथक प्रयत्नों, संघर्ष और श्रद्धा से आर्य समाज को शक्तिशाली ओर विस्तृत करने की चिन्ता अन्तिम श्वास तक करते रहे।

5. व्यंकटराव जी:– व्यंकटराव जी कंधार जिला नांदेड़ के रहने वाले थे। इन्होंने स्टेट कांग्रेस द्वारा संचालित सत्याग्रह में भाग लिया और दण्ड भोगते रहे। कारावास के अधिकारियों द्वारा मार–पीट के कारण 18 अप्रैल 1938 ई. में आप परलोक सिधार गये।

6. विष्णु भगवान जी:– विष्णु भगवान जी ताण्डूर (गुलबर्गा) के रहने वाले थे। इन्होंने गुलबर्गा में ही सत्याग्रह किया और वहीं इन्हें कारावास का दण्ड दिया गया। आपको गुलबर्गा से औरंगाबाद और फिर हैदराबाद जेल में रखा गया और यहां दूसरे सत्याग्रहियों के साथ इन्हें इतना पीटा गया कि ये सहन न कर सके और 2 मई 1939 ई. में आपने 30 वर्ष की आयु में अपना शरीरान्त किया।

7. माधवराव सदाशिराव जी:– आप लातूर के रहने वाले थे। आपने 30 वर्ष की आयु में आर्य सत्याग्रह में भाग लिया और गुलबर्गा जेल में बन्द कर दिये गये। 26 मई 1939 ई. के दिन कड़कती धूप में नंगे पैर जेल में कठिन परिश्रम करने से रोगग्रस्त हो गए। चिकित्सा का कोई प्रबन्ध नहीं किया गया और आप इस प्रकार निजाम सरकार की क्रूरता के कारण देहावसान कर गये। माधव राव सदाशिराव के देहान्त की सूचना पाकर असंख्य नर–नारी इनके अन्तिम दर्शन करने गए पर पुलिस ने रोक दिया और जेल में ही इनका शव अग्नि की भेंट कर दिया गया।

8. पाण्डुरंग जी:– उस्मानाबाद के रहने वाले युवा आर्य सत्याग्रही को सत्याग्रह के कारण ही कारावास का दंड दिया गया था। गुलबर्गा जेल में इन पर इन्फ्लूएंजा का आक्रमण हुआ पर चिकितसा का कोई प्रबन्ध न किया गया। हालत चिन्ताजनक होती गई। 25 मई 1939 के दिन इन्हें नागरिक औषधालय में भेजा गया और वहीं 27 मई को इनका देहान्त हो गया। असंख्य नर–नारी इनके अन्तिम दर्शनों को आए पर पुलिस ने इन्हें वापस जाने पर विवश कर दिया और पुलिस द्वारा ही इनका अन्तिम संस्कार किया गया।

9. राधाकृष्ण जी:– राधाकृष्ण जी निजामाबाद के एक राजस्थानी थे। 1903 ई. में आपका जन्म हुआ था। आपके पिता का नाम जीतमल था। 1934 ई. में आप आर्य समाजी बने और तभी से इसके प्रचार की धुन लग गई। इन्होंने ही निजामाबाद में आर्य समाज की स्थापना की थी। इसी कारण आप पुलिस की वक्र दृष्टि में खटकने लगे। मुहर्रम के दिनों में आप पर मुकद्मा चलाया गया और इनसे एक साल के लिए दो हजार रुपये का मुचलका लेकर छोड़ा गया। आर्य सत्याग्रह के समय आप बड़े उत्साह के साथ चन्दा एकत्रित करने में जुटे थे। 2 सितम्बर 1931 ई. के दिन एक अरबी ने छुरा घोंपकर इन्हें मार डाला और यह बात सर्वविदित हो गई कि इनकी हत्या के षड्यन्त्र में पुलिस का हाथ था।

10. लक्ष्मण राव जी:– आपने धार्मिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए सत्याग्रह किया। जेल के नृशंसात्मक कठोर व्यवहार को सहन न कर सकने कारण 3 अगस्त 1939 ई. को हैदराबाद जेल में आपका देहान्त हो गया।

11. शिव चन्द्र जी:– आपका जन्म 3 मार्च 1916 ई. में दुबलगुण्डी में हुआ था। आपके पिताश्री का नाम अन्नपक्षप्पा था। 1935 ई. में मैट्रिक परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की थी। सरकार की ओर से आपको छात्रवृत्ति भी प्राप्त हुई थी। आप हुमनाबाद की एक पाठशाला में अध्यापक हो गये थे। पाठशाला के अवकाश के समय आप आर्य समाज के साहित्य का अध्ययन किया करते थे। आर्य समाज के लिए आपने बड़े उत्साह और श्रद्धा से काम किया। शोलापुर से आप सत्याग्रहियों को हैदराबाद लाते थे और सत्याग्रह के समाचार हैदराबाद से बाहर भेजते थे। 3 मार्च 1942 ई. के दिन होली में जुलूस के अवसर पर मुसलमानों ने आक्रमण कर दिया, फलस्वरूप आप शहीद हो गए। आपके साथ आपके साथी लक्ष्मण राव जी, राम जी अगड़े और नरसिंह राव जी गोलियों का निशाना बने थे।

12. राम कृष्ण जी:– राम कृष्ण जी का जन्म लावसी ग्राम में एक ब्राह्मण कुल में हुआ था और यह शहीद होने से केवल दो सप्ताह पूर्व ही आर्य समाजी बने थे। एक दिन पठानों ने घोषणा की थी कि 'उस दिन वे मन्दिर को तोड़ेंगे, जिसे धर्म पर विश्वास हो वे आकर उन मन्दिरों को उनके हाथों से बचा लें।' सब हिन्दू घबरा कर अपने–अपने मकानों में बैठ गये किन्तु जब राम ने यह घोषणा सुनी तो वे क्रोधाग्नि से जल उठे। पुजारियों ने कभी इन्हें मन्दिर में प्रवेश होने नहीं दिया था और फिर आर्य समाजी होने के कारण इन्हें मन्दिर और इन मन्दिरों की मूर्तियों से क्या रुचि, परन्तु पठानों की इस घोषणा को इन्होंने सम्पूर्ण हिन्दू जाति की मान रक्षा हेतु मन्दिर द्वार पर अपना डेरा डाला। यहाँ इन पर गोलियों की वर्षा हुई, घायल होने पर भी आपने पठानों को मार भगाया और हिन्दू जाति की लाज रख ली। स्वयं शहीद होकर इन्होंने मन्दिर की रक्षा की और जिस जाति में वे पैदा हुए थे, उसकी प्रतिष्ठा रख ली।

13. भीम राव जी:– आप हिपला (उदगीर) के रहने वाले थे। इनके मित्र माणिक राव की बहन को मुसलमानों ने मुसलमान बना लिया था। भीमराव ने उसे शुद्ध कर लिया था। इस कारण मुसलमानों ने क्रोधित होकर इनके घर को आग लगा दी और इन्हें मार कर इनके हाथ–पांव काट डाले और इन्हें आग में जला दिया।

14. माणिक राव जी:– यह भी हिपला (उदगीर) के रहने वाले थे। इनकी बहन को मुसलमान बना लिया गया था। जब इनकी बहन को शुद्ध कर लिया गया तो मुसलमानों ने माणिक राव जी को गोलियों का निशाना बना दिया था।

15. सत्य नारायण जी:– आप अम्बोलगा (वीदर) के रहने वाले थे। आर्य समाज का काम बड़े जोश के साथ करते थे, इसीलिए मुसलमान इनके शत्रु हो गए। मुहर्रम के दिनों में वे बाजार से जा रहे थे कि एक मुसलमान ने पीछे से तलवार से हमला कर दिया। वे तुरन्त ही चिकित्सालय पहुंचाए गये पर वहां जाते ही परलोक सिधार गये।

16. भीम राव जी:– यह तिवाड़े के रहने वाले थे। गुलबर्गा में ही सत्याग्रह करने के कारण जेल में डाल दिए गये थे। जेल वालों के अत्याचार से 1939 ई. में ही चल बसे।

17. अर्जुन सिंह जी:– आप आर्य समाज के एक नर–रत्न थे। आप तालुका कन्नड़ (औरंगाबाद) में पैदा हुए थे। बचपन से ही आप हैदराबाद में रहने लगे थे। अपने उत्साह और निष्ठा के कारण आप हैदराबाद दयानन्द मुक्ति दल के सेनापति बनाए गए थे। सम्वत् 1861 में जंगली विठ्ठोबा की यात्रा में कुशल प्रबन्ध करने के बाद घर वापस लौट रहे थे कि मार्ग में कुछ सशस्त्र मुसलमानों ने आप पर आक्रमण कर दिया, तुरन्त ही उस्मानिया दवाखाना भेजे गए पर दूसरे ही दिन परलोक सिधार गये।

18. गोविन्द राव जी:– आप निलंगा जिला बीदर के रहने वाले थे। सत्याग्रह करके जेल गये। पर वहां के अत्याचारों को सहन न कर सकने के कारण देहावसान कर गये।

19. गोविन्द राव जी, लक्ष्मण राव जी:– इन दोनों ने सत्याग्रह में अपनी जान की बाजी लगा दी।

आर्य समाजी शहीदों का यह बहुत ही संक्षिप्त परिचय है। जिसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि हैदराबाद में वे निजाम सरकार और मुसलमानों के अत्याचारों का निशाना बने और वैदिक पताका को ऊँचा रखने के लिए इन्होंने अपना अन्तिम रक्त बिन्दु तक बहा दिया। मैं इस अवसर पर सभी शहीद क्रान्तिकारियों सादर नमन करता हूँ।

धरोहर

भारत गणराज्य के शिल्पी

सरदार वल्लभ भाई पटेल

❑ स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती

मंत्री – आर्य प्रतिनिधि सभा, उ0प्र0

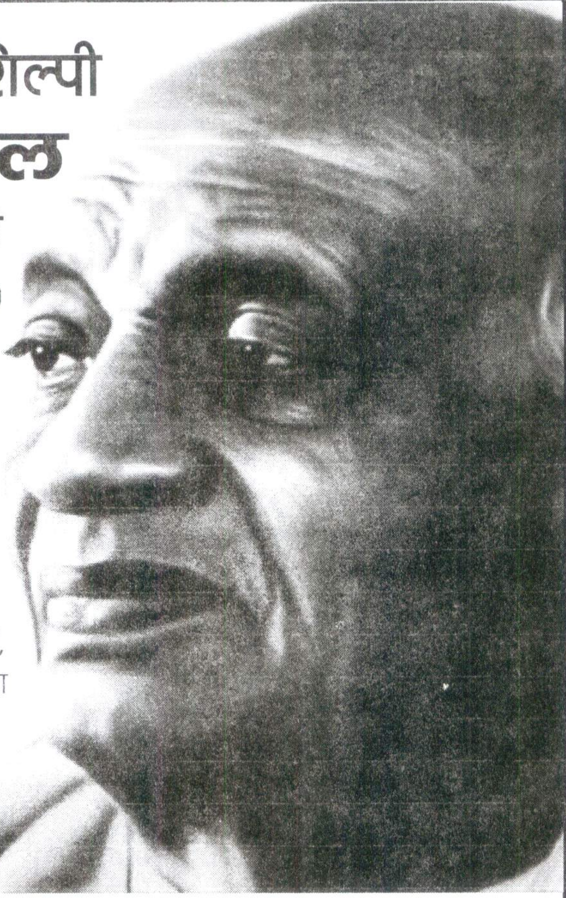

भारत देश की आजादी के समय गणराज्यों को सम्मिलित करने के पश्चात् हैदराबाद राज्य के विषय में म0 दयानन्द और आर्य समाज की प्रशंसा में सरदार बल्लभ भाई पटेल ने कहा था " कि यदि 1939 का हैदराबाद सत्याग्रह आर्य समाज द्वारा न हुआ होता तो मैं विश्वास पूर्वक कहता हूँ कि हैदराबाद भारत का अंग न बन पाता" ये विचार मा0 दयानन्द और आर्य समाज के प्रति अपनी आत्मीयता प्रदान करते हैं। ऐसे थे हमारे गणराज्य के शिल्पी पटेल जी– उनके विषय में कुछ विचार प्रस्तुत हैं जैसे–जैसे देश आगे बढ़ रहा है वैसे ही पटेल जी के त्याग एवं कर्मठता के प्रति आम लोगों की उनके प्रति आस्था विश्वास बढ़ता जा रहा है–

सरदार वल्लभ भाई पटेल के बारे में जनमानस की रुचि में वृद्धि की प्रवृत्ति दिखाई देती है। इससे पहले, हर कोई स्कूल पाठ्य पुस्तक में 'भारत के लौह पुरुष' शीर्षक से एक पाठ सरदार वल्लभ भाई पटेल के बारे में पढ़ कर संतुष्ट हो जाता था। हम यह जानते थे कि उन्होंने सबसे पहले खेड़ा और फिर दक्षिण गुजरात में सूरत के निकट बारडोली में किसान आंदोलन का नेतृत्व किया। गांधी जी ने बारडोली सत्याग्रह की सफलता के बाद उन्हें सरदार कह कर संबोधित किया। सार्वजनिक जीवन में सरदार पटेल को फिर से जानने और पढ़ने की ललक के पीछे शायद भारत के युवाओं को यह स्मरण कराना है कि वे उनके उन बुनियादी और मूलभूत मूल्यों का अनुकरण करें, जिनमें उनका विश्वास था और जिनके लिए वे संघर्ष करते रहे। परंतु, यह याद रखना चाहिए कि वे शुरु में एक सामान्य युवा व्यक्ति थे, जो अपने संकल्पों और कार्यों की बदौलत एक सुदृढ़ नेता बने। उनका जीवन युवाओं को वह मार्ग अपनाने के लिए प्रेरित करता है, जिस पर चल कर सरदार पटेल सार्वजनिक जीवन में सम्मान के शिखर पर पहुंचे।

उपरोक्त संदर्भ में हमारे लिए सरदार पटेल को समझना अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह जानना महत्वपूर्ण होगा कि सरदार पटेल ने कठिन परिश्रम और अनुभव के बल पर बचपन से ही अपने व्यक्तित्व का निर्माण शुरु कर दिया था।

31 अक्तूबर, 1875 को नडियाद में एक सामान्य पटेल परिवार में उनका जन्म हुआ, जिनका मुख्य व्यवसाय खेती था। वल्लभ भाई का कुल पांच भाइयों में तीसरा स्थान था। उन्हें एक विचित्र समस्या का भी सामना करना पड़ा। परिवार मे प्रथम और अंतिम दो भाई अत्यंत लाडले थे। उनके सबसे बड़े भाई बिट्ठल भाई पटेल, जो भारत के स्वतंत्रता के इतिहास में स्वयं एक महान व्यक्तित्व रहे हैं, की ओर सर्वाधिक ध्यान दिया जाता था। खेती और परिवार संबंधी समस्त श्रम एवं नीरस कार्य परिवार के इस तीसरे पुत्र को करने होते थे। वल्लभ भाई ने बिना किसी प्रतिरोध के उन सभी कार्यों को किया और इस तरह व्यापक अनुभव अर्जित करते हुए भौतिक दृष्टि से बुद्धिमान बने। इससे वे शारीरिक दृष्टि से बलिष्ठ और बौद्धिक दृष्टि से हर कार्य को करने में

सक्षम बनते चले गए। इससे उनमें दृढ़ता और स्पष्टवादिता का विकास हुआ। उन्होंने यह महसूस किया कि वे बचपन से ही स्पष्टवादी और सुदृढ़ रहे हैं। वे अपने में कुछ सादापन लिए हुए थे, परंतु वे तीक्ष्ण बुद्धि थे। 12 वर्ष की आयु में उन्होंने स्कूल जाना शुरु किया। वे एक उत्साह सार्वजनिक वक्ता थे, लेकिन साधारण भाषा का प्रयोग करते थे। उनमें हास्य की भावना प्रबल थी। वे एक सेल्फमेड मैन (हर काम को स्वयं करने वाले व्यक्ति) थे। उन्होंने बैरिस्टर बनने का निर्णय किया ताकि खूब पैसा कमाएं और अच्छी जिंदगी जीएं। परंतु अपने लक्ष्य को पाने के लिए उन्हें माता–पिता से कोई प्रेरणा और वित्तीय सहायता नहीं मिली। अतः उन्होंने पहले परीक्षा पास करने और एक वकील बनने का निश्चय किया और उसके बाद आगे अध्ययन के लिए पैसा जमा करना शुरु कर दिया। वे निरंतर अपने लक्ष्य का पीछा करते रहे और अंत में उन्हें सफलता मिली।

वल्लभ भाई पटेल की दृढ़ता के बारे में उनके जीवन के एक प्रसंग को प्रायः उद्धृत किया जाता है कि उन्होंने बगल में निकले एक फोड़े का उपचार करने के लिए उसे गर्म सलाख से स्वयं दाग दिया था। यह घटना उनके स्कूल के दिनों या लड़कपन की नहीं है बल्कि उस समय की है जब वे 25 वर्ष की आयु में अधिवक्ता की परीक्षा देने जा रहे थे। एक प्रतिबद्ध और दृढ़ प्रतिज्ञ वल्लभ भाई अधिवक्ता बन गए और गोधरा में वकालत करने लगे। वे विवाहित थे, परंतु उनके वैवाहिक जीवन के बारे में इसके अतिरिक्त किसी को कोई जानकारी नहीं थी कि उनकी पत्नी गुंना गांव से थी। उन्होंने गोधरा में अपना परिवार प्रारंभ किया। उन दिनों प्लेग एक महामारी के रूप में फैला, जिसे देखते हुए उन्होंने अपनी पत्नी को दूर भेज दिया और स्वयं एक संक्रमित मित्र की सेवा में लग गए। प्लेग समाप्त होने के बाद वे वापस काम पर लौटे और फिर से वकालत करने लगे। इसके बाद वे बोरसाड़ चले गए, जहां इस दंपत्ति के दो बच्चे मणिबेन और दया भाई पैदा हुए। दया भाई अपना खुद का काम करने लगे और मणिबेन ने अपना जीवन पिता को समर्पित कर दिया और जीवन–पर्यन्त उनका ध्यान रखा। उनकी पत्नी जावेरबेन अधिक जिंदा नहीं रहीं और जवानी मे ंही कैंसर के कारण चल बसीं। वल्लभ भाई ने बच्चों के लिए मां की भूमिका भी निभाई।

सरदार की मुख्य विशेषता यह थी कि वे गंभीर रहते और कभी अपनी भावनाओं को बाहर नहीं आने देते थे। उनके जीवनी लेखक राज मोहन गांधी ने अनेक अवसरों पर उनकी इस विशेषता को उद्घृत किया है। उनका व्यक्तित्व अंततः एक ऐसे व्यक्ति के रूप में उभरता है, जो सख्त और दृढ़ थे, लेकिन वे जिन लोगों के निकट आते थे, उनके प्रति सद्भावपूर्ण और खरी–खरी सुनाने वाले भी थे। परंतु, वे अपने अंदर की बात आसानी से किसी को नहीं बताते थे। परिवार के प्रति उनका समर्पण भी उल्लेखनीय था। यह उल्लेखनीय है कि अपनी जवानी में उन्होंने अपने अग्रज बिट्ठल भाई के लिए जबर्दस्त त्याग किया था। वल्लभ भाई ने अधिवक्ता के रूप में कठिन परिश्रम किया और कानून की पढ़ाई के लिए इंग्लैंड जा कर काफी धन जमा कर लिया था। उन्होंने इसके लिए आवेदन भेजा और प्रवेश संबंधी दस्तावेज उन्हें प्राप्त हो गए। परंतु, प्रवेश श्री वी.जेड. पटेल को मिला। विट्ठलभाई उनके अग्रज थे और वे भी इंग्लैंड जाकर कानून की पढ़ाई करना चाहते थे। उन्होंने दाखिला दस्तावेज का आवरण पृष्ठ देखा और अपने अनुज वल्लभ भाई को सुझाव दिया कि पहले अध्ययन के लिए वे जाएंगे, चूंकि उनका नाम भी वीजैड पटेल है। वल्लभ भाई ने गरिमापूर्ण ढंग से अपनी बारी का त्याग कर दिया। उन्होंने न केवल विट्ठल भाई के लिए त्याग किया, बल्कि इस दौरान अपनी भाभी की भी बड़े सम्मानपूर्वक देखभाल की।

उस समय के अन्य नौजवानों से भिन्न वल्लभ भाई अंततः 37 वर्ष की आयु में बैरिस्टर बनने के लिए इंग्लैंड गए। दुर्भाग्य से अध्ययन के लिए जाने से पहले उनकी पत्नी का देहांत हो गया। उस समय वे बोरसाड में अधिवक्ता के रूप में वकालत कर रहे थे। पत्नी को कैंसर था और उनका आपरेशन किया जाना था। वल्लभ भाई उन्हें बंबई (अब मुंबई) के हरकिशनदास अस्पताल ले गए और सर्जरी की तैयारी की जा रही थी। परंतु उन्हें एक मामले के सिलसिले में वापस आना पड़ा। उन्होंने सोचा था कि वे जल्द ही वापस लौट आएंगे। परंतु विधि को कुछ और ही स्वीकार था। जब वे अदालत में जिरह के लिए जा रहे थे, तभी उन्हें टेलीग्राम मिला कि जावेरबेन नहीं रहीं। उन्होंने तार को अपनी जेब में रखा और शांत भव से पैरवी के लिए गए। पैरवी पूरी होने

के बाद ही उन्होंने पत्नी की मृत्यु के समाचार का खुलासा किया। इस घटना के 19 वर्ष बाद मौलाना शौकत अली ने उन्हें 'ए वॉल्कैनो इन आइस' यानी 'बर्फ में ज्वालामुखी' की संज्ञा दी। उन्होंने अपने दोनों बच्चों को मुम्बई में मिशनरी छात्रावास में रखा। उनके बड़े भाई विट्ठल भाई पटेल, जो उन दिनों मुम्बई में बैरिस्टर थे, ने दूर से देखभालकर्ता की भूमिका निभाई। इसके बाद सरदार इंग्लैंड चले गए। उन्होंने अच्छे से पढ़ाई की और एक सिमेस्टर के लिए छूट के लिए आवेदन किया, जो उन्हें मिल गई। वे 1913 में भारत लौटे और उन्हें विद्वान् व्यक्ति समझा गया। उन्होंने अहमदाबाद में अभ्यास शुरु किया और जल्दी ही इसमें सफलता प्राप्त की। इस दौरान ब्रिज खेल में उनकी रुचि विकसित हुई। वे गांधी जी का प्रभाव अनुभव कर रहे थे। परंतु उनके कार्यक्रमों में भाग लेने के इच्छुक नहीं थे। परंतु धीरे-धीरे वे गांधीजी के गहन प्रशंसक बन गए। यह एक विचित्र मेल था जो दोनों के बीच काम कर रहा था। यहां हमें यह याद रखना चाहिए कि दोनों की मुलाकात एक परिपक्व अवस्था में हुई थी। कोचर्ब आश्रम की स्थापना 1915 में हुई और 1917 में किसी समय दोनों नेताओं की मुलाकात हुई। गांधीजी की उम्र उस समय 47 वर्ष और सरदार की उम्र 40 वर्ष थी।

वल्लभ भाई अहमदाबाद में बस गए थे और उनकी प्रैक्टिस अच्छी चल रही थी। 1917 में उन्हें म्युनिसिपल बोर्ड के लिए भी चुना गया था। उन्हें स्वच्छता समिति का अध्यक्ष भी बनाया गया था। उसी वर्ष शहर में प्लेग फैला और वल्लभ भाई पटेल ने स्थिति को बेहतर ढंग से संभाला। उन्होंने व्यक्तिगत साहस दिखाया और महामारी को रोकने के लिए बेहतर प्रबंध किए। यह महसूस किया गया कि तत्कालीन म्युनिसिपल कमिश्नर ठीक से रुचि नहीं ले रहे थे और उनके खिलाफ भारी रोष पैदा हो रहा था। वल्लभ भाई पटेल ने विरोध प्रदर्शन का नेतृत्व किया और कमिश्नर को हटवाने में कामयाब हुए। इस संदर्भ में यह बात उल्लेखनीय थी कि वल्लभ भाई पटेल स्वयं सार्वजनिक जीवन में और इसलिए उन्होंने गांधीजी का आंकलन करने के बाद उनसे जुड़ने का निश्चय किया था। वल्लभ भाई पटेल को गांधीजी की सबसे अच्छी बात यह लगी कि वे बड़ी साफगोई के साथ बात करते थे। उन्होंने स्पष्ट रूप से यह देखा कि गांधीजी वही करते थे, जो वे कहते थे। इसलिए जब गांधीजी ने बैठक में पूर्णकालिक सुदृढ़ स्वयंसेवकों की बात की, तो वल्लभ भाई पटेल उनमें शामिल हो गए। उन्होंने 'कोई कर अदा न करने' के लिए किसानों के आंदोलन का सक्षम नेतृत्व किया। खेड़ा सत्याग्रह के बाद वे कांग्रेस में एक प्रतिष्ठित नेता बन गए। उन्हें गुजरात प्रांतीय कांग्रेस समिति का अध्यक्ष बनाया गया और वे 1946 तक इसके अध्यक्ष रहे।

सरदार पटेल, गांधीजी से अति प्रभावित थे। वे इस बात से पूरी तरह आश्वस्त थे कि स्वतंत्रता के लिए संघर्ष का गांधीजी का रास्ता सही है वे इस बात को भी अच्छी तरह स्वीकार करते थे कि स्वयं को बदले बिना और हर संभव सादगीपूर्ण भौतिक जीवन अपनाए बिना सार्वजनिक जीवन में उतरना और राष्ट्र की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करना संभव नहीं हैं उन्होंने पश्चिमी वस्त्र छोड़ दिए और नियमित रूप से कताई शुरू की और खादी के वस्त्र पहने। वल्लभ भाई पटेल ने गांधीजी को अपना सर्वोच्च नेता माना और उनके रास्ते पर चलने वाले नेता बने। उन्होंने संगठनकर्ता की अपनी भीतरी शक्ति के साथ गुजरात प्रांतीय कांग्रेस की सेवा की। उन्होंने अहमदाबाद म्युनिसिपल कांग्रेस की लंबे समय तक सेवा की और 1924 और 1928 के बीच वे अहमदाबाद नगर पालिका के अध्यक्ष रहे। उन्होंने सुदृढ़ निर्णय लिए और सभी प्रकार के विपरीत दबाव को निष्प्रभावी किया। अहमदाबाद के वर्तमान तिलकमार्ग को चौड़ा करने में वे मकान और दुकान मालिकों के साथ सख्ती से पेश आए। जिनकी संपत्तियां हटानी पड़ीं थीं। कुछ लोगों ने समस्या को सांप्रदायिक रंग देने की कोशिश की, परंतु वल्लभ भाई ने पूरे मनोवेग से समस्या को एक म्युनिसिपल क्षेत्र के भौतिक आयोजना संबंधी मुद्दे के रूप मे हल किया।

सूरत जिले में बारदोली में किसानों के सत्याग्रह का सफलतापूर्वक नेतृत्व करने के बाद उन्हें सरदार की उपाधि दी थी। किसानों से कहा जा रहा था कि वे देय से अधिक राजस्व अदा करें। गांधीजी ने वल्लभ भाई से कहा था कि वे इस मुद्दे का समाधान करने के लिए काम करें। एक सफल आयोजक के रूप मे वल्लभ भाई ने किसानों में असाधारण साहस पैदा किया। ब्रिटिश प्रशासन राजस्व के बदले अचल और चल संपत्ति की कुर्की कर रहा था। वल्लभ भाई ने क्षेत्र की महिलाओं को

भी प्रेरित किया कि इस उद्देश्य के लिए वे अपने पतियों को संघर्ष करने और जेल जाने के लिए तैयार करें। यह एक लंबी लड़ाई थी, लेकिन अंततः ब्रिटिश सरकार को झुकना पड़ा। वल्लभ भाई के नेतृत्व को इसका श्रेय मिला और गांधीजी ने उन्हें सरदार कह कर पुकारा। बारदोली में स्वराज आश्रम की स्थापना की गई, जो आज भी एक जीवंत संगठन है, जो गांधीवादी सिद्धांतों पर काम करने का प्रयास कर रहा है।

बहुत कम लोग जानते हैं कि गांधीजी और अन्य सहयोगियों के साथ सरदार पटेल भी गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद के सह–संस्थापकों में से एक थे। वे 1930 से कई वर्ष तक इसके कुलपति रहे और गांधीजी की हत्या के बाद 1948 में इसके कुलाधिपति भी बने। उनकी निर्भीकता और दृढ़ता का पता एक घटना से चलता है। 1933–34 में जब सरकार ने गुजरात विद्यापीठ को बंद करने का निर्णय ले लिया, तो गांधीजी और काका साहेब कालेलकर ने विश्वविद्यालय पुस्तकालय को अहमदाबाद म्युनिसिपैलिटी में स्थानांतरित करने का फैसला कर लिया। सरदार पटेल उस समय जेल में थे। जब वे जेल से बाहर आए, तो उन्हें इस निर्णय की जानकारी मिली। उन्होंने गांधीजी का विरोध किया और उनसे कहा कि उनका फैसला निरंकुश है। ऐसा निर्णय केवल संचालक मंडल की पूर्ण बैठक में ही किया जा सकता था। गांधीजी ने उनकी बात स्वीकार की और सरदार विश्वविद्यालय पुस्तकालय को वापस लाने मे सफल हुए। आज गुजरात विद्यापीठ पुस्तकालय गुजरात के सबसे बड़े पुस्तकालयों में से एक है, जहां आठ लाख से अधिक पुस्तकें है।

राजनीतिक मामलों में सरदार पटेल गांधीजी की भावनाओं का सम्मान करते थे। उन्होंने हमेशा उनके फैसलों का सम्मान किया। वे गांधीजी के निर्णयों के अनुयायी मात्र अथवा अंशानुकरण करने वाले मात्र नहीं थे, बल्कि अधिकतर अवसरों पर गांधीजी के निर्णय उन्हें सोचे समझे लगते थे। सरदार पटेल समझते थे कि गांधीजी के निर्णय अधिकतर अवसरों पर सुविचारित और परिगणित होते हैं। यह अक्सर कहा जाता है कि बारदोली सत्याग्रह के सफल नेतृत्व के बाद 1929 में कांग्रेस का अध्यक्ष बनने की बारी सरदार पटेल की थी, परंतु गांधीजी ने उन्हें जवाहरलाल नेहरू का समर्थन करने की सलाह दी और सरदार पटेल खुशी–खुशी इसके लिए सहमत हो गए। स्वतंत्रता के बाद सरदार पटेल ने देश को जोड़ने में इस्पात की दुर्लभ शक्ति का परिचय दिया। उनके प्रयासों का यशोगान ऊँचे स्वर में किया जाता है और वे इसके पात्र भी थे, लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि इसके लिए उन्हें भारी दबाव भी झेलने पड़े, जिनका उनके स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव पड़ा। उन्हें दिल का दौरा पड़ा और वे पूरी तरह ठीक नहीं हो पाए। 15 दिसंबर, 1950 को उनकी मृत्यु हो गई।

सौराष्ट्र में जूनागढ़ नवाब और अन्य रजवाड़ों को राष्ट्र की मुख्यधारा में जोड़ना आसान काम नहीं था। इसके लिए उन्हें शक्ति और अधिकार के साथ समझाने बुझाने और मोल भाव करने की कला का भी सहारा लेना पड़ा। देशी रजवाड़ों को जोड़ने की प्रक्रिया में उनके व्यक्तित्व की इस विशिष्टता ने विशेष योगदान किया। हैदराबाद के नवाब को आत्मसमर्पण करने के लिए राजी करना लोहे के चने चबाने जैसा था। इस कार्य में उन्होंने सुविचारित शक्ति का प्रदर्शन किया। इसी तरह भोपाल का मामला भी टेढ़ी खीर था। युवा पीढ़ी को समझना चाहिए कि एक उप प्रधानमंत्री और गृहमंत्री के रूप में उन्होंने जवाहरलाल नेहरू को पूरी तरह अपना नेता स्वीकार किया। इस संदर्भ में कश्मीर मुद्दे पर एक गलत धारणा प्रचारित की जाती रही है और उसे कुाी विश्वसनीयता भी मिलती रही है। परंतु सरदार पटेल कश्मीर समस्या की जटिलता को समझते थे और इस बारे में नेहरू जी से उनकी कोई अलग राय नहीं थी।

कठिन श्रम, ईमानदारी, निर्भीकता, दृढ़ता, शांत और सुदृढ़ विचारों ने वल्लभ भाई को वास्तव में एक सरदार–एक नेता बनाया। उन्होंने हमारा मार्ग प्रशस्त किया कि कड़ी मेहनत और पूरी इच्छाशक्ति से काम किए बिना सफलता की सीढ़ियां नहीं चढ़ी जा सकतीं। कहा जाता है कि एक प्रतिशत प्रेरणा और 99 प्रतिशत मेहनत रंग लाती है। आज के युवाओं को महान नेता सरदार पटेल से यह सीख लेनी चाहिए।

मैं इस स्वतंत्रता दिवस के पावन पर्व इन्हें सादर श्रद्धाञ्जली प्रदान करता हूँ।

–गुरुकुल पूठ
गढ़मुक्तेश्वर, हापुड़
मो0 : 9837402192

राष्ट्रीय ध्वज तिरंगा की कहानी

❑ साभार– रणधीर शास्त्री –मेरठ

प्रथम चित्रित ध्वज– सर्व प्रथम सन् 1904 ई0 में मार्गरेट एलिजाबेथ मोबुल (स्वामी विवेकानन्द की शिष्या भगिनी निवेदिता) जो आयरलैण्ड की रहने वाली थी, द्वारा प्रस्तुत राष्ट्रीय ध्वज कांग्रेस के अधिवेशन बनारस में प्रस्तुत किया गया था। सन् 1905 ई. में कोलकाता के कांग्रेस अधिवेशन के समय भगिनी निवेदिता ने अधिवेशन स्थल पर स्वदेशी की प्रदर्शनी लगायी थी। इस प्रदर्शनी में उन्होंने भारत का राष्ट्रीय ध्वज भी प्रदर्शित किया। यह ध्वज भगवा रंग का था। इसके मध्य में पीले रंग का वर्ज बना हुआ था।

द्वितीय चित्रित ध्वज– 7 अगस्त 1906 को पारसी बाग चौक (ग्रीन पार्क, कोलकाता में कांग्रेस के अधिवेशन में यह ध्वज भी सुरेन्द्रनाथ बनर्जी द्वारा फहराया गया था। इस ध्वज को लाल, पीले व हरे रंग की क्षितिज पट्टियों से बनाया गया था। ऊपर की हरी पट्टी में आठ कमल, नीचे की लाल पट्टी में सूरज और चाँद बनाये गये थे। बीच की पट्टी पर वन्देमातरम् लिखा गया था।

तृतीय ध्वज सन् 1907– 22 अगस्त 1907 ई. में जर्मनी के स्टुटर्गाट नगर में आयोजित मैडम भीखा कामा (जो पारसी परिवार से थीं), उनके साथ निर्वासित किये गये कुछ क्रान्तिकारियों द्वारा तथा उन्होंने वीर सावरकर के साथ मिलकर बनाये गये भारतीय झण्डे को पहली बार विदेशी धरती पर फहराया गया। यह भी पहले ध्वज के समान ही था, सिवाय इसे कि इसमें सबसे ऊपर की पट्टी पर केवल एक कमल था। किन्तु सात तारे सप्तऋषियों को दर्शाते थे। यह ध्वज बर्लिन में हुए समाजवादी सम्मेलन में भी प्रदर्शित किया गया था और बाद में इसी ध्वज में परिवर्तन करके भारत का राष्ट्रीय झण्डा बनाया गया।

चतुर्थ चित्रित ध्वज– सन् 1917 ई. में भारतीय राजनैतिक संघर्ष ने एक निश्चित मोड़ लिया। डॉ. एनी बेसेन्ट और लोकमान्य तिलक ने घरेलू–शासन आन्दोलन के समय चतुर्थ चित्रित ध्वज को फहराया। इस ध्वज में 5 लाल और 4 हरी क्षितिज पट्टियाँ एक के बाद एक और सप्तऋषि के अभि–व्यास में इस पर सात सितारे थे। ऊपरी किनारे पर (बांये खम्भे की तरफ) यूनियन जैक था। एक कोने मे सफेद अर्ध–चन्द्र और सितारा भी था।

सन् 1921 में कांग्रेस की बैठक में पेश किया गया झण्डा– सन् 1921 ई. में कांग्रेस के बेजवाड़ा (वर्तमान विजयवाड़ा) सत्र के समय आन्ध्र प्रदेश के युवक पिंगली वैंकैया ने एक झण्डा बनाया।

(पाँचवाँ चित्रित) और महात्मा गांधी को दिया– जो 1921 में कांग्रेस की बैठक में पेश किया गया। यह झण्डा दो रंगों का बना था। लाल और हरा रंग, जो दो प्रमुख समुदायों अर्थात हिन्दू और मुस्लिम का प्रतिनिधित्व करता था। गांधी जी ने सुझाव दियाा कि भारत के शेष समुदायों का प्रतिनिधित्व करने के लिए इसमें एक सफेद पट्टी व राष्ट्र की प्रगति का संकेत देने के लिए चरखा होना चाहिये। वर्ष 1931 में तिरंगे के इतिहास में एक स्मरणीय वर्ष है। तिरंगे ध्वज को भारत के राष्ट्रीय ध्वज के रूप मे मान्यता मिली। यह ध्वज जो वर्तमान स्वरूप का पूर्वज है। केसरिया, सफेद और मध्य में गांधी जी के चलते हुए चरखे के साथ था।

छठवाँ चित्रित ध्वज– सन् 1931 ई. केसरिया सफेद और केन्द्र में एक चरखा के साथ हरे रंग का स्वराज ध्वज जो भारतीय कांग्रेस का ध्वज रहा है।

आजाद हिन्द– सन् 1943 नेताजी सुभाष चन्द्र बोस द्वारा स्थापित आजाद हिन्द सरकार का राष्ट्रीय ध्वज जिसमें ऊपर की पट्टी केसरिया नीचे की पट्टी हरी, बीच वाले सफेद पट्टी पर बाघ चित्रित है।

स्वतंत्र भारत का राष्ट्रीय ध्वज– 22 जुलाई सन् 1947 को संविधान सभा ने वर्तमान ध्वज को भारतीय राष्ट्रीय ध्वज के रूप में अपनाया गया है। स्वतंत्रता मिलने के बाद इसके रंग और उनका महत्व बना रहा, केवल ध्वज में चलते हुए चरखे के स्थान पर सम्राट अशोक के

शेष पृष्ठ 12 पर

प्रथम स्वाधीनता संग्राम में
स्वामी विरजानन्द और स्वामी दयानन्द का योगदान

❑ पं. नन्दलाल निर्भय

स्वामी दयानन्द ने 1856 में हरिद्वार के नील पर्वत के चंडी मंदिर में डेरा डाला। वहां स्वामी रुद्रसेन ने उन्हें बताया कि भारत की जनता को जगाने के लिए आजादी के आंदोलन के नेता जल्दी ही चण्डी मंदिर आने वाले हैं। कुछ समय बाद तीन–चार अनजान लोग आए और उन्होंने पूछा कि स्वामी दयानन्द कौन हैं। एकांत में बैठकर स्वामी ने उनके साथ लंबे समय क्रान्ति पर चर्चा की। उन पांच लोगों के कहने पर स्वामी जी ने साधु संगठनों को एकजुट करने का काम खुद अपने हाथ में लिया। उन्होंने स्वामी जी से कहा– महाराज! पेशावर से कलकत्ता और दक्षिण में कर्नाटक तक हजारों भारतीय तैयार हैं, पर साधु समाज का काम अभी पूरा नहीं हुआ। इन पांच लोगों के साथ दो और क्रान्तिकारियों ने स्वामी जी से संपर्क साधा। वे दोनों थे राजा गोविंद राय और रानी लक्ष्मीबाई। गोविंद राय उत्तर बंगाल के नादौर राज्य के मशहूर रानी भवानी वंश से जुड़े थे। चंडी मंदिर पर उन्होंने बताया कि किस तरह उनका राज्य हड़प लिया गया। उन्होंने स्वामी जी को 1, 101 रुपये समर्पित किए। स्वामी जी उनसे कहते हैं कि उन्हें धन की जरूरत नहीं है, पर राजा गोविन्द राय ने उनकी एक नहीं सुनीं। इसी दौरान झांसी की रानी लक्ष्मीबाई और उनके तीन अन्य अधिकारी स्वामी जी से मिलते हैं। रानी ने आंखों में आंसू भर कर अपनी कहानी सुनाई। उन्होंने कहा– महाराज, मैं एक विधवा हूँ। अंग्रेजों ने ऐलान किया है कि वे आपकी इस बहन का राज्य हड़प लेंगे। वे झांसी पर बड़ी सेना के साथ हमला करने की तैयारी में हैं। जब तक मैं जिंदा हूँ तब तक मैं उन्हें अपना खानदानी राज्य हड़पने नहीं दूंगी, आप मुझे आशीर्वाद दीजिए कि मैं एक योद्धा के रूप में लड़ते हुए अपना जीवन बलिदान कर सकूं। उस बहादुर महिला के यह शब्द सुनकर स्वामी जी गद्गद् हो उठे। उन्होंने कहा– देवी! यह शरीर शाश्वत नहीं है। वे लोग भाग्यशाली हैं जिनका शरीर किसी कर्तव्य के लिए बलिदान हो जाता है। वे अमर रहते हैं। अपनी तलवार उठाओ और इन विदेशियों से साहस के साथ लड़ो। स्वामी जी का कहना था– जनता का नेतृत्व करना और आग से खेलना एक जैसा ही खतरनाक है। छोटी सी गलती का मतलब है संपूर्ण विनाश। सावधान रहिए और आजादी का संदेश पूरे भारत में गोपनीय तरीके से फैलाया जाना चाहिए।

11 अक्टूबर 1855 को हरिद्वार की सभा में स्वामी विरजानन्द ने भाषण दिया और मोहरसिंह को आजादी के योद्धा के रूप में आशीर्वाद दिया। सभा का आयोजन स्वामी पूर्णानन्द ने हरिद्वार की पहाड़ियों में किया था। इस सभा में 565 साधु शामिल हुए। इसमें 195 मुस्लिम साधु और 370 हिंदू साधु थे। इस सभा में नेत्रहीन संत स्वामी विरजानन्द के साथ उनके शिष्य स्वामी दयानन्द भी मौजूद थे। उनके अलावा हरियाणा सर्वखाप के मंत्री या प्रमुख मोहनलाल जाट, सेना प्रमुख शिवराम जाट, उप सेना प्रमुख भागवत गूजर और पंडित शोभाराम भी उपस्थित थे। सर्वखाप के अधिकृत दस्तावेज लेखक और संदेशवाहक मीर मुश्ताक मिरासी भी वहां थे। हरियाणा सर्वखाप पंचायत पर हालांकि जाट समुदाय का आधिपत्य था, पर इसमें हरियाणा की सभी हिन्दू और मुसलमान जातियाँ भी भागीदार थीं। हरियाणा के पहलवान ब्रह्मदेव, जो जूनागढ़ अखाड़े क नागा योद्धा हो गए थे, त्यागियों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे जबकि पंडित शोभाराम बरेली से बहादुर खान के प्रतिनिधि के तौर पर आए थे।

सभा में फखरुद्दीन और स्वामी पूर्णानन्द ने अपने विचार व्यक्त किए। स्वामी पूर्णानन्द ने न सिर्फ धर्म के पालन पर जोर दिया, बल्कि राष्ट्र को ऊपर उठाने का भी आहवान किया। स्वामी विरजानन्द ने स्वामी दयानन्द (पहले का नाम स्वामी चैतन्य) से कहा कि शास्त्र और अध्यात्म समझने से पहले वे अपना समय राष्ट्र को ऊपर उठाने में लगाएं। दरअसल स्वामी दयानन्द

कुंभ मेले में स्वामी पूर्णानन्द से मिले थे और उनसे वेद–शास्त्र सिखाने का आग्रह किया था। इस पर पूर्णानन्द ने कहा था कि वे तो बूढ़े हो चले हैं, पर उनके शिष्य विरजानन्द उन्हें सिखाएंगे।

मोहरसिंह को साथ लेकर स्वामी दयानन्द तुरंत स्वामी पूर्णानन्द के आश्रम पर गए और वहां एक गुप्त बैठक हुई। उसमें बिजरौल (मेरठ) के जाट दादा शाहमल (42), ढकौली के चौधरी दयासिंह जाट, बहादुर शाह जफर के प्रतिनिधि, नाना साहेब, तात्या टोपे, राजा कुंवरसिंह, बेगम हजरत महल, रंगों बापूजी और झांसी की रानी लक्ष्मीबाई मौजूद थीं। यहां मोहरसिंह का नाम शामली के जाट चौधरी के रूप में दर्ज है। यह बात रोचक है क्योंकि मोहरसिंह शामली गए थे, जहां उनकी मुलाकात देवबंद के मोहम्मद कासिम ननौतवी और सहारनपुर के वलीउल्लाह संप्रदाय के अन्य विद्वानों से हुई थी।

1856 में हुई एक अन्य बैठक का जिक्र यहां महत्वपूर्ण है। मथुरा में हुई इस बैठक में स्वाधीनता संग्राम के सारे बड़े नेता मौजूद थे। इसका नेतृत्व स्वामी विरजानन्द कर रहे थे और इसकी कार्यवाही मीर मुश्ताक मीरासी दर्ज कर रहे थे। मिरासी का वर्णन बेहद रोचक है– 1856 सन् यानी संवत् 1913 मथुरा में एक पंचायत हुई। इस बैठक में हिन्दू, मुसलमान और अन्य समुदाय के लोगों ने हिस्सा लिया। पंचायत में नेत्रहीन साधु विरजानन्द को पालकी में लाया गया। जब वे पहुंचे तो वहीं मौजूद सभी लोगों ने उन्हें सम्मान दिया। जब मंच पर बैठे तो सभी हिन्दू और मुसलमान फकीरों ने आदर देने के लिए उनका पैर चूमा। नाना साहेब पेशवा, मौलवी अजीमुल्लाह खान, रंगो बापू और बादशाह बहादुर शाह जफर के बेटे ने उन्हें सम्मान के साथ अशर्फियां भेंट कीं।

इसके बाद स्वामी विरजानन्द ने अपनी बात शुरु करते हुए पहले ईश्वर वंदना की। फिर उन्होंने कहा– स्वाधीनता ही संपत्ति है और गुलामी छल है, एक धोका है। देश पर स्थानीय लोगों का शासन विदेशी लोगों के शासन से सैकड़ों गुना ज्यादा बेहतर है। दूसरों की गुलामी अपमान और शर्म का कारण होती है। ये क्रूर लोग हमारी जनता पर जबरदस्ती शासन कर रहे हैं। वे हमारे राजाओं का अपमान करते हैं। हमारे लोगों से जानवरों जैसा व्यवहार करते हैं। ईश्वर की नजर में सभी लोग बराबर हैं, पर ये क्रूर विदेशी उन्हें बराबर नहीं मानते । विदेशियों में कुछ अच्छाइयाँ जरूर हैं पर सच्चाई यह है कि मामले के भीतर झांकिए तो उनका सुर बदला मिलता है। वे हमारी नेक सलाह और कुदरत की अच्छाइयों को खारिज कर देते हैं। इसीलिए हम इस धरती के लोगों से अपील करते हैं कि यह हर नागरिक का कर्तव्य है कि वह देशभक्त बने और एक दूसरे को भाई माने। जो कोई हिन्दुस्तान में रहता है वह एक दूसरे का भाई है और बहादुर शाह जफर हमारे शासक हैं।

विरजानन्द का यह भाषण 1857 के दबे पक्ष को प्रकाशित करता है। इससे यह पता चलता है कि सनातन धर्म के दर्शन ने भारत में बहादुर शाह जफर को दैवीय समर्थन दिया था और किस तरह से सनातन धर्म और इस्लाम के बीच ऐतिहासिक गठजोड़ कायम किया था। अंग्रेजों और बम्बई व कलकत्ता में बैठे उनके चंद बुद्धिजीवियों को यह अहसास नहीं था कि भारत पर मुगलों का शासन सनातन धर्म के समर्थन से चल रहा था। पहाड़ों में रहने वाले ऋषियों और मुनियों की औरंगजेब सहित सभी मुगल दरबारों में पहुंच थी। मुगल दरबार में यह मान्यता थी कि जब तक पहाड़ों में रहने वाले ऋषि–मुनि तपस्या करते रहेंगे भारत और मुगल वंश सुरक्षित है।

राष्ट्रीय ध्वज तिरंगा ...
पृष्ठ 10 का शेष

धर्म चक्र को स्थान दिया गया है। इस प्रकार कांग्रेस पार्टी का तिरंगा झण्डा अंततः स्वतंत्र भारत का राष्ट्रीय–ध्वज बन गया। 'हिन्दुस्तान की आन बान व शान तिरंगा इस नये ध्वज को देश के द्वितीय राष्ट्रपति सर्वपल्ली राधा कृष्णनन ने पुनः व्याख्या की, यथा राष्ट्रीय–ध्वज की ऊपरी पट्टी में केसरिया रंग है जो देश भक्ति और साहस को दर्शाता है, बीच की श्वेत अशोक–चक्र के साथ शान्ति और सत्य का प्रतीक है। निचली हरी पट्टी उर्वरता और समृद्धि को दर्शाती है। अशोक–चक्र को प्रदर्शित करने का आशय यह है कि जीवन गतिशील है।

ब्रिटिश ईस्ट–इण्डिया कम्पनी का सन् 1801 का ध्वज। ब्रिटिश–सरकार के अधीन भारत का ध्वज 1858 से 1947 तक।

हैदराबाद आर्य सत्याग्रह 1939 की स्मृति

आर्य समाज का विजय पर्व

भारतीय संघ में हैदराबाद राज्य का विलीनीकरण और आर्य समाज की भूमिका

❑ मनुदेव 'अभय' विद्यावाचस्पति

वेद के अनुयायी और उसके प्रचारकों को सदैव ही संघर्ष करना पड़ा। इसी संघर्ष की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कड़ी 'हैदराबाद आर्य सत्याग्रह' (1939) है। कतिपय विद्वान इस महान् एवं सफल सत्याग्रह को 'हैदराबाद में धर्मयुद्ध' नामक संज्ञा से भी सम्बोधित करते हैं। वस्तुतः यह हमारे गौरवपूर्ण इतिहास का अति महत्वपूर्ण अध्याय है, जिसे पढ़कर हमारी आने वाली पीढ़ी गर्व से आत्माभिमान अनुभव करेगी।

हैदराबाद (तत्कालीन दक्षिण) आर्य सत्याग्रह वस्तुतः एक युद्ध था जिसे हैदराबाद राज्य में आर्य समाज के अधिकारों और वैदिक धर्म के प्रचार स्वतंत्रता की प्राप्ति के लिए लड़ा गया था। प्रामाणिक तथ्यों के अनुसार आर्य समाज की शिरोमणि सभा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली द्वारा निरन्तर छः वर्ष तक वैध उपायों से इस समस्या के हल का प्रयत्न किया गया था, किन्तु जब ये सारे उपाय निष्फल हो गए, तब निजाम सरकार ने आर्य समाज को सत्याग्रह करने के लिए बाध्य कर दिया।

आर्य समाज के इस निर्णय से अन्य राजनैतिक दलों तथा साम्प्रदायिक संस्थाओं को बहुत पीड़ा हुई। इन्हें अपना नेतृत्व छिन जाने की वेदना सताने लगी। इस कारण आर्य समाज के इस सत्याग्रह को साम्प्रदायिकता का आवरण देने का असफल प्रयास किया। यह कटु सत्य है कि तुष्टीकरण ही इस देश के विभाजन का एक मात्र कारण सिद्ध हो चुका है। 'सत्यमेव जयते नानृतम्' और 'असत्यमेव न जयते' के मूल सिद्धान्त को मानने वाले उस आर्य समाज के सम्मुख न तो तुष्टीकरण रूपी नाग अपना फन ऊँचा कर पाया और न गिरगिट की तरह रंग बदलने वाली कुटिल चाल ही सफल हुई। इतना ही नहीं इन्हीं तत्वों के कारण आर्य समाज के प्रति लोगों की सहानुभूति को घटाने के स्थान पर बढ़ाया ही। आर्य समाज के नेताओं ने प्रारम्भ से ही इस बात को स्पष्ट कर दिया था कि यदि किसी हिन्दू राज्य में आर्य समाज पर इसी प्रकार की आपत्ति आती है जिस प्रकार की निजाम राज्य में आई थी, तो वे वहां भी इसी उपाय अर्थात् सत्याग्रह धर्म युद्ध का आश्रय लेते आर्य समाज की घोषणा ने समाज और राष्ट्र के सम्मुख एक स्पष्ट और स्वच्छ विशाल मार्ग प्रस्तुत कर दिया। आर्य समाज ने दाहिने हाथ से कर्म किया और बाएं हाथ में विजयश्री अपनी शोभा बढ़ाने लगी।

हां, आर्य समाज की सामनीति जब छः वर्ष पश्चात् भी सफल न हुई तब भी आर्य समाज निराश न हुआ। उन्होंने सर्वप्रथम समस्त आर्य जगत् की सम्मति ज्ञात करने के लिए दिसम्बर, 1938 के अन्तिम सप्ताह में शोलापुर में आर्य महासम्मेलन का आयोजन किया। इस सममेलन का आयोजन इस 'नीति' के अनुसार था कि सम्भवतः निजाम सरकार के रवैये से आर्य समाज को सत्याग्रह न करना पड़े, किन्तु ऐसा कुछ नहीं हुआ और उस निजाम की पूंछ पूर्ववत् टेढ़ी ही रही। अन्ततः आर्य सम्मेलन शोलापुर को अपने समस्त निश्चयों के अनुसार सत्याग्रह की घोषणा करनी पड़ी। इसके सर्वप्रथम सर्वाधिकारी श्री महात्मा नारायण स्वामी जी बनाए गए। इन समस्त निश्चयों में निश्चय क्र. 3 में स्पष्ट कहा गया था– 'राज्य अथवा कर्मचारियों को न तो तबलीग शुद्धि मतांतरण में भाग चाहिए न उसे प्रोत्साहन करना चाहिए। न जेलों में हिन्दू कैदियों तथा स्कूलों में हिन्दू बच्चों को मुसलमान बनाया जाना चाहिए और न हिन्दू अनाथ, मुसलमानों के सुपुर्द किए जाने

चाहिए।' (सन्दर्भ – आर्य डायरेक्टरी, 1942, प्र. 213)

इस विशाल सत्याग्रह के संचालन हेतु 'सत्याग्रह समिति' नियत की गई। चूंकि इस आन्दोलन के सम्बन्ध में मिथ्या और भ्रमपूर्ण बातें फैलाई जा रही थीं, इसलिए उद्देश्य की पवित्रता के लिए सत्य और अहिंसा का विशुद्ध रूप से पालन अत्यावश्यक कहा गया।

धर्म युद्ध की प्रथम आहुति

– निश्चयानुसार पूज्य महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज ने दिनांक 29 अगस्त, 1939 को कतिपय सत्याग्रहियों के साथ हैदराबाद राज्य में प्रवेश किया। उन्हें प्रथमतः पकड़कर पुलिस निजाम राज्य के बाहर कर गई। किन्तु जब स्वामी जी ने पुनः वहां जाकर सत्याग्रह प्रारम्भ कर दिया, तब उन्हें पकड़कर एक साल के कारावास का दण्ड दिया गया। बस फिर क्या था, दावानल की भांति पूरे देश में जोश फैल गया और जनता बड़े से बड़े त्याग के लिए तैयार हो गई। आर्य समाज भी अंगड़ाई लेकर युद्ध के लिए ताल ठोंककर तैयार हो गया। सत्याग्रह के रहस्य को समझकर मार्च, 1939 में निजाम सरकार की ओर से समझौते की चर्चा प्रारम्भ हुई, किन्तु 9 अप्रैल, 1939 में शोलापुर में अंतरंग सभा की आवश्यक बैठक हुई। इधर निजाम सरकार पीछे हट गई, इस कारण इसमें कोई विशेष गति नहीं आई।

उधर निजाम सरकार का दमन चक्र प्रबलता से घूमने लगा। ज्यों–ज्यों दमन चक्र बढ़ने लगा, त्यों–त्यों सत्याग्रह में उग्रता और तीव्रता बढ़ने लगी। इधर तुष्टीकरण की नीति वाले दलों ने इसके सम्बन्ध में अनेक भ्रांतियां फैलाना शुरु कर दीं। किन्तु जनता ने आर्य समाज की न्याय प्रियता, सत्यतापरक अहिंसा के मूल्य का आंकलन करना शुरु किया, इस कारण 'तुष्टीकरण' की कुचालें निष्प्रभावी हो गईं। अब इस धर्म युद्ध ने और भी व्यापकता प्रकट कर ली। कहते हैं– यह युद्ध इतना व्यापक और इतना प्रसिद्ध हो गया था कि उन दिनों देश की सार्वजनिक हलचलों में इसके सिवा और कोई हलचल सर्वोपरि न थी। सभी भाषायी तथा आंग्ल पत्रों में इस युद्ध के अतिरिक्त कोई चर्चा न थी। यह ध्यान रखने का तथ्य है कि देश के अग्रणियों की चिन्ता का कोई विषय था तो केवल यह युद्ध था।

यह युद्ध और इसकी चर्चा भारत की सीमा तक ही सीमित न रही वरन् समुद्र पार पार्लियामेण्ट के भवनों तक जा पहुंची।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की आज्ञाओं और निर्देशों को आर्य जनता ने बड़ी तत्परता और सम्मान के साथ ग्रहण किया। यह एक ऐतिहासिक वस्तु बन गई। जब युद्ध अपने चरम पर था, उस समय 2,000 सत्याग्रही शिविरों में पड़े हुए आदेश की प्रतीक्षा कर रहे थे। इनमें हिन्दू, सिक्ख, मुसलमान तथा ईसाई बन्धु थे। हमारे अनुशासन एवं संयम की सभी आंग्ल पत्र तथा भाषायी पत्र भूरि–भूरि प्रशंसा कर रहे थे। विशेषकर हिन्दू जनता ने आर्य समाज की विपत्ति को अपनी विपत्ति समझा और उसके निवाराणार्थ उन्होंने आर्य समाज तथा आर्य समाजियों के तथा कन्धे से कन्धा भिड़ाया और ऐसा कौन सा त्याग था जो उसने इस अवसर पर न किया हो।

'असत्यमेव न जयते' के अनुसार आर्य समाज रूपी श्रीकृष्ण का पांचजन्य शंख एक बाद पुनः ध्वनित हो उठा और उसने विजय की घोषणा की। निजाम सरकार ने आर्य समाज के इस सत्याग्रह के सम्मुख घुटने टेक दिए और उसने 'सुधारों' की घोषणा की। यह घोषणा 20 जुलाई सन् 1939 को की थी। इसके पूर्व दिनांक 17 जुलाई, 1939 को निजाम सरकार ने अपना निर्णय प्रकट कर दिया था।

इस सत्याग्रह में कुल 10,579 सत्याग्रही जेल गए थे। इसके अतिरिक्त 2,000 सत्याग्रही वे थे जो 8.8.1939 से पूर्व केन्द्रों में पहुंच गए थे और आदेश की प्रतीक्षा कर रहे थे।

इस प्रकार आर्य समाज द्वारा छोड़ा गया यह धर्म युद्ध जो कि अज्ञान, अन्याय और अभाव के विरुद्ध प्रारम्भ हुआ था, परमात्मा की कृपा सत्याग्रहियों के तप–त्याग तथा महान बलिदानियों के कारण सुखद अन्त के रूप में विजय श्री को प्राप्त कर सका। इन सभी श्रेष्ठ आत्माओं के प्रति आभार तथा प्रणाम।

योगेश्वर श्रीकृष्ण

❑ डॉ0 शिवकुमार शास्त्री

विचार विचक्षण पाठकवृन्द! गोपाल सहस्र नाम की पुस्तक में योगीराज कृष्ण को चारों और बदमाशों का सरताज कहा गया है चौरः जारः शिरोमणि भक्त शिरोमणि सूरदास के शब्दों में–

नीवी ललित गही जदुराई।

जबहि सरोज धरयो श्रीफल पर तब यशुमति तहं आई।।

नीवी कहते हैं नाड़े को और श्रीफल का अर्थ है स्तन, इससे अधिक स्पष्ट अर्थ करने की मैं आवश्यकता नहीं समझता।

मतिराम, बिहारी, देव, विद्यापति आदि कवियों ने श्रीकृष्ण की जो छीछलेदर की है क्या किसी जनसामान्य की भी वैसी होगी? भागवतपुराण, सूरदास और रीतिकाल क कवियों ने कृष्ण जी महाराज का जो चित्र उपस्थित किया है, उसे पढ़कर और सुनकर माथा शर्म से झुक जाता है।

बारह वर्ष की कठोर तपस्या के पश्चात् प्रद्युम्न हुआ। श्रीकृष्ण को अपनी इस सन्तान पर इतना गर्व था कि उसे 'में सुतः' कहकर गौरवान्वित होते ाि। क्या ऐसा तपस्वी और सदाचारी व्यक्ति गोपियों के पीछे भाग सकता है? चोर और लम्पट हो सकता है?

भगवान् कृष्ण एक आदर्श महामानव और नेता थे। वे जानते थे कि **यद् यद् आचरति श्रेष्ठः तत् तत् एवं इतरे जनाः** जैसा बड़े लोग आचरण करते हैं, वैसा ही अनुसरण उनके अनुयायी किया करते हैं।

आज राधा के बिना कृष्ण की कल्पना भी नहीं हो सकती। परन्तु पुराणों के अनुसार भी राधा के साथ निम्न स्तर का उपहास करते हुए चित्रित किया है। महाभारत में भगवान् कृष्ण का जीवन अनेक पक्षों से चित्रित हुआ है, परन्तु उसमें कहीं राधा के नाम की गन्ध भी नहीं है।

योगीराज कृष्ण का हमारे इतिहास में उल्लेखनीय नाम है। मर्यादा पुरुषोत्तम राम और योगी राज कृष्ण के बिना हमारी संस्कृति अधूरी है। वे दोनों व्यक्तित्व युगपुरुष थे। अपने–अपने समय में दोनों ने वेदिक संस्कृति की रक्षा के लिएसर्वस्य होम दिया। शुक्राचार्य अपने नीतिसार नामक ग्रन्थ में लिखते हैं– न कूटनीतिरभवत् श्रीकृष्ण के समान कोई कूटनीतिज्ञ नहीं हुआ।

पाण्डवों का सम्पूर्ण राजनीति चक्र कृष्ण जी के हाथ में था। उन्हीं की कूटनीति से भीष्मपितामह, गुरु द्रोणाचार्य, जयद्रथ, कर्ण, दुर्योधन आदि का वध संभव हुआ। यदि कृष्ण जी महाराज पाण्डवों की ओर न होते तो महाभारत का रूप कुछ और ही होता।

श्रीकृष्ण आदर्श मित्र थे। उन्होंने जहां सुदामा के साथ मित्रता का आदर्श निभाया वहां अर्जुन के लिए भी मित्र के रूप में काम आए। अर्जुन के सम्बन्ध में श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर से कहा था– **मांसान्युत्कृत्य दास्यामि फाल्गुनार्थे महीपते।** यदि आवयक हुआ तो मैं अर्जुन के लिए अपना मांस भी काट कर दे सकता हूँ।

निर्भीकता की प्रतिमूर्ति कृष्ण जी महाराज ने कौरवों की सभा में चारों ओर शत्रुओं से घिरे रहने पर भी कड़क कर कहा था–

"दुर्योधन! लाक्षागृह तुमने बनवाया था। भीम को विष तुमने दिया था। जुए का खेल तुमने रचाया था। भरी सभा में द्रोपदी का अपमान तुमने किया, फिर भी अपने को निर्दोष सिद्ध करने में लगे हो। निश्चय ही तुम्हारी जीवन लीला समाप्त हो चुकी है। शान्ति अच्छी थी, तू उसे ठुकरा रहा है।"

कृष्ण जी महाराज ने बड़ी–बड़ी क्रान्तियाँ कराई परन्तु किसी लोभ–लालच के वशीभूत नहीं, अपितु अन्याय का सामना करने के लिए। उन्होंने जो भी देश जीता उसे अपने आधीन करने की कभी भी चेष्टा नहीं की और न ही अपने किसी सम्बन्धी को उसका लाभ पहुंचाया। श्रीकृष्ण का सम्पूर्ण जीवन नैतिकता के आधार पर प्राणिमात्र का सुख चिन्तन करते हुए व्यतीत हुआ। जीवनपर्यन्त श्रीकृष्ण ने विश्व–कल्याण किया। सन्ध्या और हवन उनके जीवन के महत्वपूर्ण अंग थे। जिस समय पाण्डवों के दूत बनकर वे दुर्योधन के पास जा रहे थे, रास्ते में सूर्यास्त के समय उन्होंने रथ रुकवा कर सन्ध्या की–

अवतीर्य स्थातूर्णम् कृत्वा शौचं यथाविधि।

रथमोचनमादिश्य सन्ध्यामुपविवेश ह।।

यह है योगीराज कृष्ण का सच्चा स्वरूप। आर्यजगत् उन्हें सदाचारी और संयमी मानता है, अन्य लोग लम्पट तथा धूर्त! आर्यजगत् उन्हें योगी मानता है, तो कुछ लोग भोगी। आज की इन विषम परिस्थितियों में भगवान् कृष्ण को स्मरण कर हम अपने कर्तव्य का पालन कर सकते हैं।

श्रीकृष्ण ने कहा था **स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः** अर्थात् अपने कर्तव्य का पालन करते हुए यदि प्राणों की आहुति भी देनी पड़े तो श्रेयस्कर है। योगीराज की गीता कर्तव्य का पाठ पढ़ा रही है। प्रसिद्ध स्वतन्त्रता–सेनानी लोकमान्य बालगंगाधर तिलक ने कहा था–

अपहाय निजं कर्म कृष्ण कृष्णेति वादिनः।

ते हरेर्द्वेषिणः पापा धर्मार्थं जन्म यद्धरेः।

जो कर्तव्य से तो पराङ्मुख रहते हैं और कृष्ण के नाम की माला जपते हैं, वे कृष्ण के सब से बड़े दुश्मन और पापी हैं, क्योंकि कृष्ण का जन्म धर्म की स्थापना और कर्तव्य पराणता के लिए हुआ था। जो भगवान् कृष्ण के नाम की माला तो जपते हैं, बड़े–बड़े मन्दिर और मूर्तिया बनवाते हैं, कीर्तन करते हैं, परन्तु अपने चरित्र को नहीं सुधारते, वे केवलमात्र भाण्ड के समान ही हैं।

योगीराज कृष्ण का एक नाम है गोपाल। हम जय गोपाल, जय गोपाल करने वाले इस ओर कभी ध्यान नहीं देते कि गोपाल के देश में सूर्य निकलने से पहले हजारों गायों का कत्ल कर दिया जाता है। आज देश को मुरलीधर कृष्ण की नहीं चक्रधर कृष्ण की नहीं चक्रधर कृष्ण की आवश्यकता है। आज हमें रासलीला वाले कृष्ण का अनुयायी नहीं, अन्याय का विरोध करने वाले कृष्ण का अनुयायी बनना होगा। चित्र एक माध्यम है। उसके द्वारा हमें वैसा बनने का प्रयत्न करना चाहिए।

महाभारत काल में तो एक द्रौपदी का चीरहरण हुआ था, आज नारी जाति के सम्मान का दम भरने वाले हमारे देश में अनेक द्रौपदियों का सरे आम चीरहरण ही नहीं शरीर नीलाम होता है। आज हम इस देश में ही नहीं, जब सारे विश्व में श्रीकृष्ण जन्माष्टमी का पर्व धूमधाम से मना रहे हैं तो हमें इस बात की प्रतिज्ञा करनी चाहिए कि हम उस युगपुरुष के सच्चे अनुयायी बनकर देश में व्याप्त अन्याय के विरुद्ध सतत् संघर्ष करते हुए अपने कर्तव्य का पालन करेंगे। महर्षि दयानन्द के शब्दों में, ''श्रीकृष्ण चन्द्र का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है। उनका गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सदृश है, जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्रीकृष्ण जी ने जन्म से मरण पर्यन्त कुछ भी बुरा काम किया हो, ऐसा नहीं लिखा''।

स्थापना दिवस वेदारम्भ संस्कार महोत्सव

गुरुकुल महाविद्यालय पूठ–गढ़मुक्तेश्वर जि0–हापुड़ में 19–20 अगस्त 2017 को गंगा किनारे उत्साह पूर्वक मनाया जा रहा है। जिसमें उ0प्र0 सरकार के संस्कृति मन्त्री श्री चौ0 लक्ष्मी–नारायण सिंह जी पूर्णाहुति पर 20 अगस्त को पहुँच रहे हैं। आप सपरिवार अधिक संख्या में दर्शन देवें।

नोट : गढ़मुक्तेश्वर से डरहाकुटी होते हुए पूठ गंगा किनारे तक आने की व्यवस्था है।

सत्यानन्द आर्य
अध्यक्ष

प्रणवानन्द सरस्वती
प्रबन्धक

धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
संचालक

राजीव आचार्य
प्राचार्य

ज्ञानेन्द्र गाधी
मन्त्री

महेश आर्य
कोषाध्यक्ष

दिनेश आचार्य
व्यवस्थापक

दारानगर गंज नशाबन्दी सम्मेलन के अवसर पर स्वामी ओमवेश जी के अभिनन्दन में स्वामी आर्य वेश एवं सभा मंत्री स्वामी धर्मेश्वरानन्द जी

पर्यावरण दिवस पर वृक्षा रोपड़ करते गुरूकुल पूठ के ब्रह्मचारी, आचार्य राजीव जी, स्वामी अखिलानन्द जी एवं सभा मंत्री स्वामी धर्मेश्वरानन्द जी

सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए स्वामी धर्मेश्वरानन्द जी

आगरा जिला सभा को सम्बोधित करते हुए सभा प्रधान डा0 धीरज सिंह जी

पंजी०सं० आर.एन.आई.–२४४१/५७– आर्यमित्र ०८–१५ अगस्त, २०१७ पोस्टल रजि. जी.पी.ओ. लखनऊ/एन.पी.–[illegible]–१८ एक प्रति ₹ २.००

आर्य मित्र
नारायण स्वामी भवन, ५-मीराबाई मार्ग, लखनऊ दूर./फैक्सः ०५२२-२२८६३२८
का० प्रधानः ०६४१२७४४३४१, मंत्री- ०६८३७[illegible]०९६२, व्यवस्थापक- ६३२०६२२२०५
ई-मेलः apsabhaup86@gmail.com

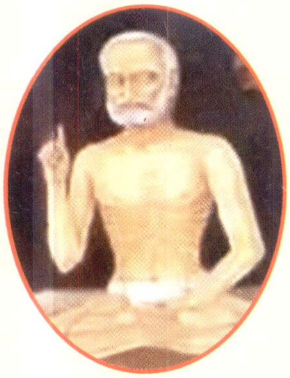
गुरूवर ब्रह्मर्षि विरजानन्द दण्डी

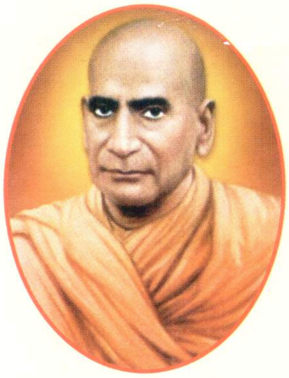
स्वामी श्रद्धानन्द जी

स्वामी मुनीश्वरानन्द जी

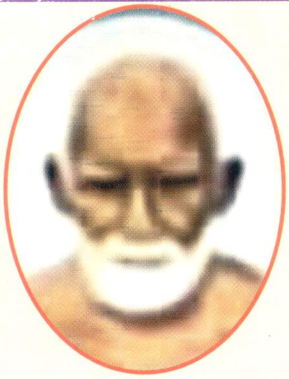
स्वामी सर्वदानन्द जी

पं0 लेखराम जी

स्वामी स्वतंत्रता नन्द जी

लालालाजपत राय

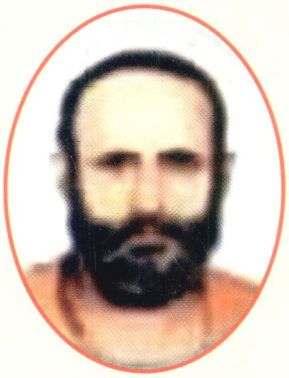
स्वामी ओमानन्द जी

पं0 गुरूदत्त विद्यार्थी

पं0 नारायण स्वामी जी

म0 हंसराज जी

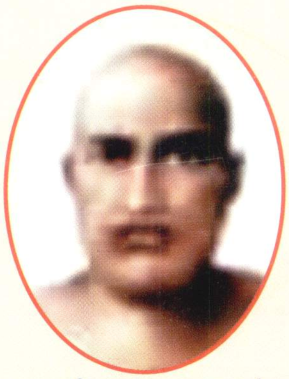
स्वामी दर्शनानन्द जी

स्वामी-आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश सम्पादक - मुद्रक - प्रकाशक - श्री स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती, भगवानदीन आर्य भाष्कर प्रेस, 5-मीराबाई मार्ग, लखनऊ के लिए अस्थायी रूप में शारदा प्रिंटिंग प्रेस, मीराबाई मार्ग, लखनऊ से मुद्रित एवं प्रकाशित लेखों में वर्णित भाषा या भाव से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है- सम्पूर्ण विवादों का न्याय क्षेत्र लखनऊ न्यायालय होगा।